ओ३म्

सुधारक

गुरुकुल झज्जर का लोकप्रिय मासिक पत्र

वर्ष ७० अंक ५ जवनरी २०२३ पौष २०७९ वार्षिक मूल्य १५० रु०

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

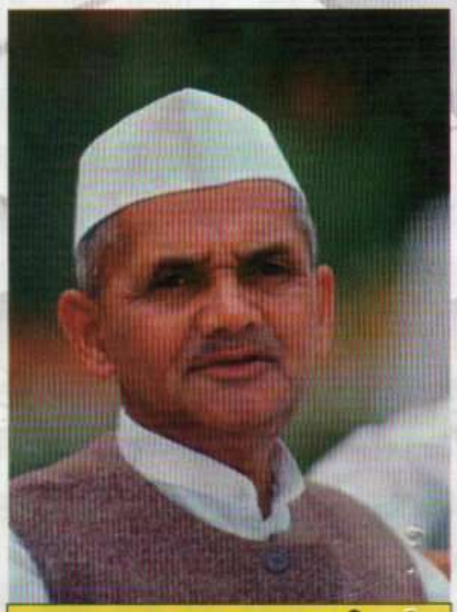

लाल बहादुर शास्त्री

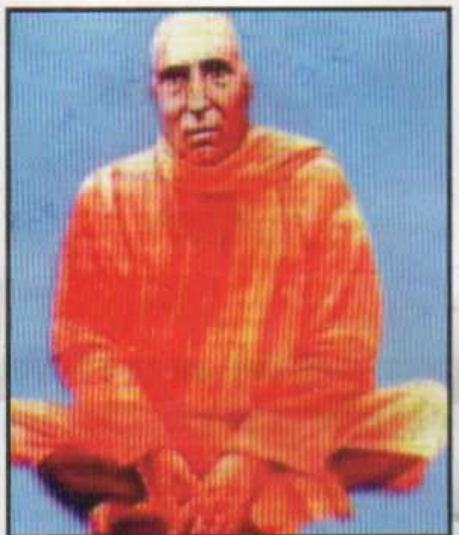

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

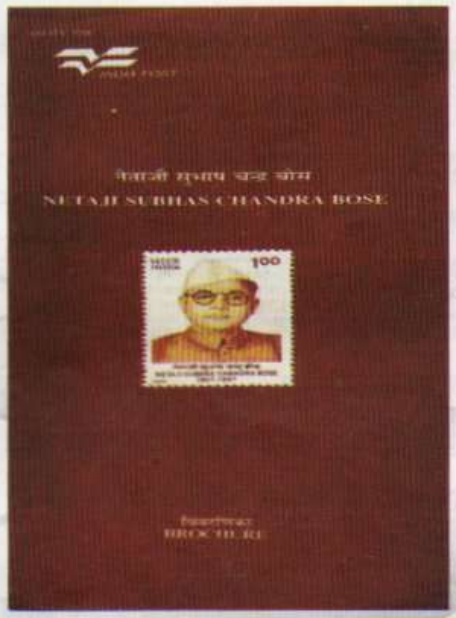

संस्थापक : स्व० स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
प्रधान सम्पादक : आचार्य विजयपाल
सम्पादक : विरजानन्द दैवकरणि
व्यवस्थापक : ब्र० साहिल आर्य

सुधारक के नियम व सविनय निवेदन

1. सुधारक का वार्षिक शुल्क 150 रुपये है तथा आजीवन सदस्यता शुल्क 1500 रुपये है।
2. यदि सुधारक 20 तारीख तक नहीं पहुंचता है तो आप व्यवस्थापक सुधारक के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही सुधारक पुन: भेज दिया जाएगा।
3. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा **'व्यवस्थापक सुधारक'** के नाम भेजें। सुधारक वी.पी. रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जाएगा।
4. लेख सम्पादक सुधारक के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त, सारगर्भित तथा मौलिक होने चाहिएं तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे जाने चाहिएं। अशुद्ध एवं गन्दे लेखवाला लेख नहीं छापा जाएगा। लेखों को प्रकाशित करना न करना तथा उनमें संशोधन सम्पादक के अधीन होगा। अस्वीकृत लेख डाक-व्यय प्राप्त होने पर ही वापिस भेजे जाएंगे।
5. सुधारक में विज्ञापन भी दिए जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जाएगा।
6. यह सुधारक मासिक पत्र समाजसुधार की दृष्टि से निकाला जाता है। इसमें आपको धर्म, यज्ञकर्म, समाजसुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, योगासन आदि विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।
7. सुधारक के दस ग्राहक बनानेवाले सज्जन को एक वर्ष तक नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा पचास ग्राहक बनानेवाले सज्जन को दो वर्ष नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा उसका फोटो सहित जीवन परिचय सुधारक में निकाला जाएगा।

-व्यवस्थापक

वर्ष :७० अंक : ५
जनवरी २०२३ विक्रमाब्द २०७९
दयानन्दाब्द १९८ कलिसंवत् ५१२१
सृष्टिसंवत्- १,९६,०८,५३,१२३

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
१.	वेदोपदेश	१
२.	सम्पादकीय	२
३.	नेताजी सुभाषचन्द्र बोस	४
४.	मां की पुकार	६
५.	भाषा का संस्कृति और जीवन से संबंध	१२
६.	शोक सूचना	२०
७.	शीत ऋतु के रोग-रोकथाम व उपचार	२१
८.	बगावत	२४
९.	एक में अनेक	२४

नोट :- लेखक अपने लेख का स्वयं जिम्मेवार होगा।

सुधारक मासिक पत्र का वार्षिक शुल्क 150 रुपये भेजकर स्वयं ग्राहक बनें और दूसरे साथियों को भी ग्राहक बनाकर सुधार कार्य में सहयोग दीजिये।

-व्यवस्थापक सुधारक

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक तथा हरियाणा शिक्षा बोर्ड भिवानी से सम्बद्ध

आर्षपाठविधि के विशेष केन्द्र महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर का

107 वां वार्षिक महोत्सव

दिनांक:- 18-19 फरवरी सन् 2023 ई.

सब सज्जनों को सहर्ष सूचित किया जाता है आपके प्रिय महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर का वार्षिक महोत्सव उपर्युक्त तिथियों को उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। इस महोत्सव पर आर्यजगत् के प्रसिद्ध संन्यासी, विद्वान् और भजनोपदेशक पधार रहे हैं।

सामवेद पारायण यज्ञ

15 फरवरी से डॉ० जगदेवसिंह वेदालंकार के ब्रह्मत्व में यज्ञ का आयोजन प्रारम्भ होगा, इसकी पूर्णाहुति 19 फरवरी को प्रात: 10 बजे होगी। यजमान बनने के इच्छुक सज्जन शीघ्र सम्पर्क करें तथा यज्ञ के प्रति श्रद्धा रखने वाले महानुभावों से निवेदन है कि यज्ञ हेतु घी, सामग्री, समिधा आदि प्रदान कर पुण्य के भागी बनें।

व्यायाम प्रदर्शन

18 फरवरी को सायं 4 बजे से गुरुकुल के ब्रह्मचारियों द्वारा व्यायाम का आकर्षक प्रदर्शन किया जायेगा, जिसमें आसन, दण्ड-बैठक, लोहे के सरिये मोड़ना, जीप रोकना तथा कमाण्डो आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

18 फरवरी को सायं 8 बजे विद्यार्यसभा का वार्षिक अधिवेशन होगा।

सभी सज्जनों से नम्र निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में पधार कर महोत्सव की शोभा बढायें।

निवेदक

डॉ० योगानन्द शास्त्री	आचार्य विजयपाल योगार्थी	राजेन्द्र सिंह मलिक	राजवीरसिंह आर्य
कुलपति	आचार्य	उप प्रधान	मन्त्री
9899847999	9416055044	9416762895	9811778655

सम्पादकीय

समाज सुधार हेतु कुछ सुझाव

महर्षि दयानन्द जी ने सन् १८७५ में लिखा था-

विवाह में बहुत धन का नाश करना अनुचित ही है, क्योंकि वह धन व्यर्थ ही जाता है। इससे बहुत राज्य नष्ट हो गये और वैश्य लोगों का भी विवाह में धन के व्यय से दिवाला निकल जाता है। सब लोगों को धन का मिथ्या व्यय करना अनुचित है। इससे धन का नाश विवाह में कभी न करना चाहिये।

१. परन्तु आज भारतीय समाज में प्रायशः यह देखने में आता है कि धनिकवर्ग तो विवाहों में करोड़ों रुपये व्यय कर देते हैं। उनकी देखा-देखी अल्प सामर्थ्य वाले गृहस्थ भी लाखों रुपये व्यय करके विवाह सम्पन्न करते हैं। दहेज के रूप में भी घर के लिए सारा सामान देते हैं। यदि वर आर्थिक स्थिति से दृढ़ है तो अपनी आवश्यकतानुसार सभी सामान स्वयं जुटा लेगा। यदि इस योग्य नहीं है तो दहेज के सामान से कितने दिन गुजारा करेगा। बाद में तो उसे स्वयं अपनी आर्थिक स्थिति की नियमितता हेतु यत्न करना ही पड़ेगा। समाज में ऐसी गलत परिपाटी चल पड़ी है कि लगन या विवाह में दिये जाने वाले दहेज को देखने-दिखाने में गौरव अनुभव करते हैं। दहेज न देने पर कन्या पक्ष और वधू को अनादर की दृष्टि से देखा जाता है। दहेज न देने पर वधू को मानसिक और शारीरिक रूप से पीड़ित किया जाता है, इसे सहन न कर पाने की अवस्था में या तो वधू स्वयं आत्महत्या कर लेती है अथवा उसकी ससुराल वाले ही किसी न किसी प्रकार उसे मार देते हैं। संकोच के मारे वह वधू अपने माता पिता आदि को अपने सताये जाने की सूचना भी नहीं देना चाहती। माता ने भी उसे यही समझाया होता है कि पति तेरा परमेश्वर है, ससुराल तेरा घर है, कुछ भी हो जाये, वहीं रहना और मरना है। ऐसी परम्परा समाज और परिवारों में विघटन पैदा करती है। अतः इससे बचना चाहिये।

२. विवाह में भोजन सामग्री का बहुत दुरुपयोग होता है। पराया अन्न समझकर लोग खाद्य पदार्थ जीभ के स्वाद में मात्रा से अधिक ले लेते हैं, जब वह नहीं खाया जाता तो उस जूठे भोजन को कूड़ेदान में डाल देते हैं। ऐसे व्यक्ति अपने घर में भोजन को इस प्रकार बरबाद कभी नहीं करते, क्योंकि उसे अपनी कष्ट कमाई से प्राप्त किया मानते हैं। यही भावना दूसरे के द्वारा दिये गये भोजन के प्रति भी होनी चाहिये। विवाह करने वाले को भी चाहिये कि वह सैंकड़ों प्रकार के व्यंजन न बना कर स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों का ही प्रबन्ध करे।

३. विवाह के अवसर पर वर पक्ष वाले नाचने-कूदने में व्यर्थ समय नष्ट करते रहते हैं। अनेक युवा उस समय नशे में चूर रहकर समय का दुरुपयोग करते हैं इससे विवाह-संस्कार के मुख्य कार्य का मुहूर्त निकल जाता है। देर होने के कारण पंडित को कहा जाता है कि आप जल्दी-जल्दी फेरे करवा दीजिये। ऐसी अवस्था में विवाह संस्कार करने वाला पंडित विवाह के योग्य उपदेश भी नहीं दे पाता। यह उपदेश वर-वधू के पूरे जीवन में सफलता प्राप्त करने का हेतु होता है, परन्तु उसकी महत्ता न समझने के कारण फेरे जल्दी समाप्त करने का ही आग्रह रहता है।

४. जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो दाह संस्कार करने से पूर्व उसके शव पर अनेक चादरें कफन के रूप में उढ़ाई जाती हैं। यह भी धन का अनावश्यक व्यय है। इसकी अपेक्षा दाह संस्कार हेतु घी-सामग्री आदि पर जितना व्यय किया जाये वह श्रेष्ठ है। अनेक लोग उन चादरों को भी चिता में डाल देते हैं जिससे प्रदूषण ही बढ़ता है। कुछ लोग हीन समझे जाने वाले निर्धनों को भी दे देते है।

५. मृतक व्यक्ति के घर पर १३ दिन तक परिचितों का आना जाना लगा रहता है। पहले सूचना देर से मिलने के कारण कई दिन तक पारिवारिकजन तथा आत्मीयता रखने वाले लोग कई दिन तक आया करते थे। परन्तु आजकल तुरन्त सूचना मिल जाती है। अत: तीन-चार दिन के भीतर ही शन्तियज्ञ आदि प्रक्रिया पूरी कर देनी चाहिये। आज अति व्यस्तता और भाग-दौड़ का युग है। अत: अधिक दिन तक मृतक के परिवार में बैठना भी संभव नहीं होता। जितने दिन अधिक शोक मनाया जाएगा उतना ही महिला वर्ग को अधिक रोना पड़ता है। अत: उनके स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना चाहिये।

६. मृतक व्यक्ति के निमित्त शान्तियज्ञ के समय उस व्यक्ति के चित्र पर पुष्प चढ़ाकर हाथ जोड़ना भी निरर्थक है। वह जब जीवित था, उस समय उसका सम्मान करना तो उपयुक्त था, परन्तु चित्र पर पुष्प अर्पित करने से उस निर्जीव चित्र को क्या प्राप्ति होगी। उस व्यक्ति के गुणों का स्मरण करना, उसके द्वारा प्रारम्भ किये गये अधूरे कार्य को पूरा करने की प्रेरणा और व्रत लेना उस के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होती है।

आशा है समाज के प्रबुद्ध जन उपर्युक्त विचारों का अपने निकटवर्ती सज्जनों और ग्रामों में प्रचार प्रसार करके भारतीय जनसमुदाय को उन्नत करने का प्रयत्न करेंगे जिससे जनता में फैली हुई भ्रान्ति और निरर्थक रूढ़ियां समाप्त हो कर व्यक्ति सत्य को ग्रहण करके सुखी हो सकें।

विरजानन्द दैवकरणि
९४१६०५५७०२

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

- आनन्ददेव शास्त्री, पूर्व प्रवक्ता (संस्कृत) दिल्ली सरकार

नेताजी सुभाष का जन्म २३ जनवरी १८९७ के दिन कटक के सरकारी वकील जानकी दास बोस के घर हुआ। १९१५ ई. में जब सुभाष कॉलेज में पढ़ रहे थे। एक अंग्रेज प्रोफेसर सी. एफ. ओटन ने एक छात्र के ब्लैकमन्की (काला बन्दर) और नेताजी को कुत्ता कह दिया। नेताजी ने उसी समय ओटन के गाल पर जोरदार तमाचा मारा। परिणामस्वरूप नेताजी को कॉलेज से निकाल दिया गया। किन्तु बाद में परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल गई और नेताजी अपनी कक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

पिताजी के व्यंग्य कसने पर नेताजी ने थोड़े ही समय में अच्छे अंकों से आई.सी.एस. परीक्षा उत्तीर्ण की किन्तु अंग्रेजों की गुलामी न करने के कारण नौकरी नहीं की।

२९ जनवरी १९३८ के दिन आप गांधी जी समर्थित कांग्रेस अध्यक्ष पद के प्रत्याशी श्री पट्टामिसीता रम्मैया को भारी मतों से हराकर कांग्रेस अध्यक्ष चुने गये। इस जीत को गान्धी जी ने अपनी हार बताया। तब गान्धी जी के असहयोग के कारण आपने कांग्रेस अध्यक्ष पद से त्याग पत्र दे दिया और फारवर्ड ब्लाक नामक अलग पार्टी बनाई।

१९४२ में आप कलकत्ता नगर निगम के कार्यकारी अधिकारी नियुक्त हुए। उन्हीं दिनों अंग्रेज सरकार ने एक भाषण देने के कारण फिर जेल में डाल दिया। तब नेताजी ने आमरण अनशन शुरु कर दिया और नेता जी की हालात बहुत खराब हो गई। लाचार होकर सरकार ने आपको जेल से निकाल कर उनके कलकत्ता वाले एलगिन रोड़ वाले मकान में नजरबन्द कर दिया। आपकी निगरानी के लिये ६४ पुलिस वाले लगाये गये। मकान की दूसरी मंजिल पर पीछे की तरफ आपका कमरा था। घर से गायब होने के कई दिन पहले ही आपने लोगों से मिलना जुलना बन्द कर दिया था। दाढ़ी बढ़ा ली, कमरे के सामने पर्दा टंगा रहता। उनके पास एक घंटी थी, जब नेताजी उसे बजाते तभी कोई आदमी काम पूछने ऊपर आता, तब आप पर्दे के पीछे से ही पर्चा लिखकर बाहर रख देते। आने वाला व्यक्ति सामान बाहर रखकर चला जाता। आप उस पर्दे के पीछे से ही उठा लेते। एक बार जब कई दिनों तक घंटी नहीं बजी। तब घर वालों ने अन्दर जाकर देखा तो अन्दर कोई नहीं था। नेताजी गायब हो चुके थे। उनके काबुल पहुंचने पर ही सरकार को उनके भागने का पता चला।

काबुल से नेताजी इटली दूतावास की सहायता से रूस के रास्ते जर्मनी पहुंचे। वहां

हिटलर ने उनका बड़ा स्वागत किया। उन्हें एक राष्ट्राध्यक्ष के समान, कार, कोठी, टेलीफोन, रेडियो, अंगरक्षक आदि सुविधायें दी। तब नेताजी ने बर्लिन से भारवासियों के नाम एक संदेश प्रसारित किया। तब अंग्रेजों को पता चला कि नेताजी जर्मनी पहुंच चुके हैं। वहां नेताजी ने भारवासी युद्धबंदियों में भाषण दिया। उनके भाषण से प्रभावित होकर पांच हजार सैनिक उनकी सेना में भर्ती हो गये और उस सेना ने अंग्रेजों के साथ युद्ध भी किया। नेताजी चाहते थे कि उन सैनिकों को भेजकर अफगानिस्तान की तरफ से भारत पर आक्रमण किया जाय किन्तु तभी जर्मनी और रूस के बीच में अनबन हो गई अत: योजना सफल न हो सकी।

उन्हीं दिनों नेताजी के पास जापान सरकार का जापान आने का बुलावा आया। **पनडुब्बी द्वारा जापान प्रस्थान** - तब नेताजी अपने साथ पनडुब्बी चालक और दो अन्य व्यक्ति जिसमें कैप्टन कंवल सिंह जी (मांडोठी) जोकि प्रसिद्ध आर्यनेता प्रो. शेरसिंह जी के बहनोई थे को साथ लेकर पनडुब्बी से यात्रा करके जापान पहुंचे। स्मरण रहे उस समय विश्वयुद्ध चल रहा था और यह यात्रा खतरे से खाली न थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध और आजाद हिन्द सेना- दिसम्बर १९४१ में जापान ने सुदूर पूर्व के देश हांगकांग, फिलिपीन्स, मलाया, अण्डेमान, बर्मा, सुमात्रा आदि देशों को युद्ध होते ही जीत लिया था। इन देशों में भारतीय सैनिक अंग्रेजों की तरफ से लड़ रहे थे। उनमें से ६० हजार सैनिकों को जापान ने बन्दी बना लिया था। इन्हीं दिनों प्रसिद्ध क्रान्तिकारी रास बिहारी बोस ने जापानियों से मिलकर जनरल मोहन सिंह के सहयोग से उन युद्ध बन्दियों को '' आजाद हिन्द सेना'' नामक संगठन बनाया। किन्तु रास बिहारी बोस वृद्ध हो चुके थे और अस्वस्थ भी थे। अत: कार्य आगे नहीं बढ़ रहा था। तब श्री रास बिहारी बोस ने जापानियों से अनुरोध किया कि आप नेताजी को यहां सेना सम्मेलन के लिये बुला दें। तब जापानी अधिकारियों के अनुरोध पर नेता जी २.७.१९४३ ई. को जर्मन से पनडुब्बी द्वारा जापान पहुंचे।। जापानी अधिकारियों ने नेताजी का भव्य स्वागत किया और जर्मनी की तरह ही उन्हें सभी सुविधायें प्रदान की। तब नेताजी ने भारत के लोगों के लिये एक संदेश प्रसारित किया। इन्हीं दिनों सिंगापुर की एक सभा में नेताजी का स्वागत किया गया। तब नेताजी ने सुदूरपूर्व में विद्यमान लाखों भारतीयों से आजाद हिन्द सेना में भर्ती होने और धनदान देने की अपील की।

नेताजी को सिंगापुर में केतोग नामक स्थान में एक शानदार बंगले में ठहराया गया। यह बंगला समुद्र के किनारे स्थित था और इसके चारों तरफ १२ फुट ऊंची दीवार बनादी गई थी। इस बंगले में बाग बगीचे थे। यहां पर हर समय सैनिकों का पहरा रहता था।

प्रधानमंत्री टोजो ने नेताजी को एक विमान भी भेंट किया था। इसी विमान में नेताजी आते जाते थे। सुदूरपूर्व में इस तरह का कार्य इससे पहले किसी ने नहीं किया था। अत: जनता उन्हें नेताजी के नाम से पुकारने लगी। जापानी नेताजी को चन्द्रबोस के नाम से पुकारते थे।

तब सिंगापुर में नेताजी से मिलने जापानी और जर्मन सैनिक अधिकारी और अन्य देशों के प्रतिनिधि भी आते थे। श्री रास बिहारी बोस ने नेताजी का परिचय आजाद हिन्द फौज के कर्नल भोंसले और जनरल मोहन सिंह आदि सैनिक अधिकारियों से कराया।

४.७.१९४३ में होने वाले सम्मेलन में हांगकांग, इण्डोनेशिया, फिलिपीन्स, मंचूरिया, जावा, सुमत्रा, बर्मा आदि देशों के प्रतिनिधि पहले ही दिन इकट्ठे हो गये थे। नेताजी ने तिरंगे झंडे में चर्खे के स्थान पर छलांग लगाते शेर की स्वीकृति दी थी। ४.७.१९४३ को प्रात: नेताजी रास बिहारी बोस के साथ पहुंचे। इनके पीछे जापानी अधिकारी की कारें भी पहुंच गईं। तब नेताजी का सैनिक सम्मान किया गया।

झांसी रानी रेजीमेण्ट- १२.७.१९४३ ई. को नेताजी का भाषण आजाद हिन्द सेना की महिला शाखा के सामने हुआ। इस भाषण के तीन महीने के बाद २२.१०.१९४३ ई. को रानी झांसी रेजिमेण्ट का उद्घाटन हुआ। इस रेजिमेण्ट की सेनापति डॉ. लक्ष्मी थी।

भारतीय स्वतंत्रता संघ - नेताजी ने सुदूरपूर्व के सब भारतीयों को बुलाकर ''भारतीय स्वतंत्रता संघ'' की भी स्थापना की। इस संघ में उन देशों का कोई भी भारतीय सम्मिलित हो सकता था। इसी प्रकार आजाद हिन्द सेना में कोई भी युद्धबन्दी, कोई भी भारवंशी सम्मिलित हो सकता था। नेताजी ने ९.७.१९४३ के भाषण में तीन लाख सेना भर्ती करने का लक्ष्य घोषित किया।

हिकारी किकान - जापान में विदेशी लोगों के प्रबन्धन आदि से सम्बन्धित एक विभाग 'हिकारी किकान' नाम से था। विदेशियों से सम्बन्धित सब प्रकार के अधिकार इस विभाग के पास थे। नेताजी की तीन लाख सेना की भर्ती की बात सुन कर इस विभाग के अधिकारियों के कान खड़े हो गये और इस विभाग ने उसी समय से आजाद हिन्द सेना के काम में रोड़े अटकाने शुरु कर दिये। जब नेताजी जापान के उच्च अधिकारियों से किसी काम के लिये कहते तो वे तुरन्त स्वीकृति दे देते (दिखावे के लिये)। किन्तु उस बात पर आचरण बिल्कुल नहीं करते थे। जापानी नहीं चाहते थे कि आजाद हिन्द सेना इतनी विशाल और सशक्त हो, अत: इस विषय में वे परोक्ष में काना फूंसी करते रहते थे। जब नेताजी के आदमी नेताजी से शिकायत करते थे, तो नेताजी हंसकर टाल देते और कभी इस विषय पर जापानियों से बात भी करते थे। नेताजी के लाख प्रयत्न करने पर भी जापानियों ने आजाद हिन्द सेना की संख्या पचास हजार तक

करने की ही स्वीकृति दी थी।

जापानी लोग आजाद हिन्द सेना को शस्त्र और राशन देने में भी आना कानी करते थे। अत: जो शस्त्र और राशन मिलता उससे ही काम चलाना पड़ता था। जापानी चाहते थे कि युद्धबन्दी लोग आजाद हिन्द सेना में कम से कम भर्ती होने चाहिये। जिससे बचे हुए लोगों से मजदूरी कराई जा सके। आजाद हिन्द सेना में अन्त तक बीस हजार युद्धबन्दी और बीस हजार ही बाहर के लोग भर्ती हुए थे। जब इन लोगों को ट्रेनिंग दी जाने लगी तो हथियारों में कटौती कर दी गई। इसके कारण ट्रेनिंग में बाधा आने लगी।

आजाद हिन्द सरकार ने ''आजाद हिन्द'' नाम का अखबार भी निकालना प्रारम्भ किया था। जब नेताजी ने ''रानी झांसी बिग्रेड'' की घोषणा की तो उत्साह से बहुत सी महिलायें वहां पहुंच गई। भर्ती करके इनको ट्रेनिंग भी दी गई। युद्ध क्षेत्र में इस बिग्रेड ने बड़ी वीरता दिखाई।

आजाद हिन्द बैंक- १५ अगस्त १९४३ के दिन सिंगापुर गें फैरर पार्क में नेताजी का अभिनन्दन हुआ और उन्हें फूल मालायें भी पहनाई गई। नेताजी के भाषण के बाद इन फूल मालाओं की नीलामी हुई और कई मालाओं की बोली तो २ लाख रुपये तक पहुंच गई। २५.१०.१९४३ को नेता जी ने मलाया देश के लोगों के सामने भाषण दिया। इस सभा में दो करोड़ रुपया इकट्ठा हो गया था। आजाद हिन्द सेना में परस्पर अभिवादन ''जय हिन्द'' से किया जाता था।

सुदूरपूर्व के अन्य देशों में नेता जी जहां भी गये। उनका शानदार स्वागत हुआ। एक स्थान पर एक तमिल ने नेता जी को सोने की तोप भेंट की और एक अन्य ने २ लाख रुपये भेंट किये। महिलाओं ने अपने आभूषण उतार कर नेताजी को भेंट दिये। इस प्रकार एकत्रित धन से नेताजी ने ''आजाद हिन्द बैंक'' की स्थापना की। इन पैसों से ही नेताजी ने लाखों रुपयों का युद्ध का सामान जापानियों को भेंट किया।

२१.१०.१९४३ ई. के दिन एक सभा में नेताजी ने आजाद हिन्द सरकार की भी घोषणा की। सरकार के अधिकारी निम्नलिखित थे:-

१. नेताजी सुभाष - राष्ट्रपति- प्रधानमन्त्री -युद्धमन्त्री पर राष्ट्रमन्त्री-सेनापति।
२. डॉ. लक्ष्मी - महिला मण्डल मन्त्री।
३. श्री एस.एस. अय्यर -प्रचार मन्त्री।
४. ए. एस. चटर्जी - अर्थ मन्त्री।
५. आनन्द मोहन - मन्त्री मण्डल सचिव।
६. श्री रास बिहारी बोस- वरिष्ठ परामर्शदाता
७. डॉ. ए.एन. खान -विधि परामर्शदाता।

भारतीय युद्धबन्दियों की मनोवृत्ति -

१. महाराष्ट्र के दो युद्धबन्दी अधिकारी भी वहां थे। ये अन्दरूनी रूप से नेता जी के विरोधी थे। ये दोनों नेताज़ी की सभाओं में जाकर शोर शराबा करके बाधा डालने का प्रयत्न करते थे

और लोगों को सेना में भर्ती होने से रोकते थे, धमकाते थे और पीट कर भगा भी देते थे।

२. एक राजपूत अफसर ने नेताजी के सूचना अधिकारी और बाद में प्रसिद्ध इतिहास लेखक श्री पी.एन. ओक के सामने कहा-मुझे लगता है कि ये नेताजी असली नेताजी सुभाष नहीं हैं।

३. छावनी का एक युद्धबन्दी अधिकारी नेताजी से प्रभावित जवानों को, कभी सेना में भर्ती न हो जाय। इसलिये उस दिन उन लोगों को उस स्थान से बाहर भेज देते थे। जिस दिन वहां नेताजी का भाषण होता था।

इस प्रकार और भी कितनी दूसरी घटनाएं हुई। जब आजाद हिन्द सेना के अधिकारियों तथा जापानियों को बाधा डालने के कारण ही आजाद हिन्द सेना की संख्या ४० हजार तक ही पहुंच पाई।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि जापानी अधिकारी आजाद हिन्द सेना के मार्ग में बाधा डालते थे। फिर भी थोड़ी मात्रा में जो नये पुराने शस्त्र थे। उन्हें लेकर कभी दुर्गम मार्गों को पार करते और लारी या मोटर बोटों से समुद्र पार कर आजाद हिन्द सेना बर्मा देश को पार करके भारतीय सीमा पर समुद्र पार कर जनवरी १९४४ में पहुंच गई। इस समय मोर्चे पर जापानी तथा आजाद हिन्द सेना साथ-साथ लड़ रही थी। १८. ८.१९४४ ई. को इस सेना ने भारत के पहले गांव में झंडा फहराया। हमला होते ही मणिपुर का राजा और वहां के अंग्रेज के अधिकारी दिल्ली भाग गये। आजाद हिन्द सेना ने इम्फाल पर कब्जा कर लिया और इम्फाल से कोहिमा जाने वाले मार्ग को रोक लिया। जिससे अंग्रेज सेना कोहिमा की तरफ न भाग सके। आजाद हिन्द सेना ने अंग्रेज सेना से हथियार डलवाने का प्रयास किया। अंग्रेज सेना आत्मसमर्पण करना भी चाहती थी। किन्तु किन्हीं कारणों से रुकी हुई थी। यदि उस समय जापानी हवाई हमले कर देते तो इम्फाल का पतन हो जाता और आजाद हिन्द सेना आगे आ जाती। किन्तु जापानियों की कुटिलता के कारण ऐसा नहीं हुआ तभी पैसेफिक सागर में अमेरिका की सेना की गतिविधि तेज हो गई और जापानियों ने अपने हथियार और सेना वापिस भेजनी शुरु कर दी। ऐसा करने से आजाद हिन्द सेना को तो पीछे हटना ही पड़ा। साथ ही जापान को भी इसका फल शीघ्र मिल गया। जापान हार गया। यदि जापान उस समय सारा जोर इम्फाल पर लगा देता तो आजाद हिन्द सेना भारत में आगे बढ़ जाती और साथ ही भारत की जनता भी विद्रोह कर देती और अंग्रेजों को भारत से भागना पड़ता।

शस्त्रों की कमी के रहते भी आजाद हिन्द सेना थोड़े हथियारों से ही लड़ती रही। श्री पी.एन. ओक जोकि आजाद हिन्द सेना में सूचना प्रसारण अधिकारी थे अपनी पुस्तक "भारत का दूसरा स्वतंत्रता संग्राम के पृष्ठ २९७ पर लिखा है कि

उस समय आजाद हिन्द सैनिक श्री राम सरूप भी बताते थे कि हम पीपे बजाकर दुश्मनों को डराते थे। किन्तु परिस्थिति बदलने के कारण आजाद हिन्द सेना को वापिस लौटना पड़ा। उन्हीं दिनों अमरीका ने जापान के हिरोशिमा एवं नागासाकी पर एटम बम गिरा दिया। जिससे लाखों लोग मर गये थे और जापान ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली। तब सभी जापानी एवं आजाद हिन्द सेना के अधिकारियों ने विचार किया कि किसी प्रकार नेताजी को जापान से सुरक्षित निकालना चाहिये। तब उपर्युक्त योजना द्वारा नेताजी को विमान द्वारा मंचूरिया भेज दिया गया और ४-५ दिन बाद घोषणा कर दी कि नेताजी का विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया है और नेताजी की मृत्यु हो गई है। किन्तु लोगों ने इस बात को सत्य नहीं माना और कुछ समय बाद नेताजी के भक्त नेता श्री सत्यनारायण सिंह निजी खोज यात्रापर जापान एवं मंचूरिया आदि देशों में गये। तब अनेक लोगों ने उनके सामने बताया कि हमने इस दुर्घटना के बाद नेताजी को मंचूरिया में जीवित देखा है। बाद में मंचूरिया पर रूस का अधिकार हो गया और रूस सरकार ने नेता जी को बन्दी बना साइबेरिया की केकटस जेल में डाल दिया। जहां उन्हें एक भारतीय बन्दी ने स्वयं देखा और अनुमान किया जाता है १९६७ के आस पास वहीं नेताजी की मृत्यु हो गई। क्योंकि नेहरु परिवार ने १९६८ तक नेताजी के परिवार की जासूसी करवाई थी। ऐसा समाचार अखबारों में छपा था। ऐसे वीर सेनानी को शतशः नमन।

सम्पर्क सूत्र:-
१११/१९, आर्यनगर, झज्जर
मो. ९९९६२२७३७७

अस्थल बोहर रोहतक की गरिमामयी गद्दी को ठुकराकर भारत की स्वतंत्रता हेतु जेल की यातनायें सहने वाले वीर की आप बीती कहानी -

मां की पुकार

-महन्त चन्द्रनाथ योगी

पिछली घटनाओं से पाठकों ने देख लिया कि इस समय मेरा जीवन कितना संकटापन्न था। मुझे जेल की जिन्दगी इससे कहीं अधिक सुखकर जंचने लगी और उन लोगों से ईर्ष्या होने लगी जो मुझसे पहले जेल में जा चुके थे। मेरे जी में आया करता कि वहां सैंकड़ों आदमियों के बीच में रहना, न कहीं चलना और न शिर पर कोई जिम्मेदारी। कितना सुख है। मैं आज ही गिरफ्तार होकर इस दुखित जीवन से छूट जाऊं तो अच्छा हो। मैं अहमदपुर गांव में होने वाली अपनी बेइज्जती को अभी भूला भी नहीं था कि एक और घटना मेरे सामने आई। जिसने मेरा बाहर रहना मुश्किल कर दिया और वह यह थी- मैं घाट हेड़े गांव के अन्दर से गुजर रहा था कि ज्यों ही लाला सुगनचन्द जी के मकान के सामने पहुंचा त्यों ही उनकी धर्मपत्नी जो कि घर से बाहर निकल रही

थी, मुझे देखकर फिर अन्दर ही चली गई। उसके इस प्रकार बाहर निकलने और फिर झपाटे से वापिस लौट जाने का जो रहस्य था वह तत्काल ही मेरे अन्त:करण में उतर गया। अहा! मुझे मुंह छिपाना दूभर हो गया। अगर मुझ में कोई सिद्धि होती तो मैं इस समय पृथ्वी में समा जाता। मैं जिस प्रकार दुम दबाकर झपाटे के साथ इसके आगे से निकल गया था। यह याद मेरे हृदय में हमेशा ताजा बनी रहेगी। गोहत्या करने वाला जैसे अपने आप को पापी समझ कर हमेशा नीचे देखता है वैसे ही मैं भी देखता जा रहा था। बात यह थी - श्रीमती जी ने लाला जी को इस काम में कदम बढाने से बहुत रोका था। क्योंकि यह उनका वियोग सहने को तैयार न थी। लेकिन जब वे नहीं माने तो विवश होकर इन्हें भी सन्तोष करना ही पड़ा। आज जो सिर्फ जेल में ही नहीं गये थे बल्कि हड्डियां टूट जाने के कारण जाने के बाबत कुछ भी कह सकना मुश्किल है। वे फिर कब नाम करेंगे और यह सब जिसके कारण हुआ वह शख्स मैं हूं। मेरे मन में कल्पना उठी भला हमने क्या सोचा होगा। बस यही न कि उसके ..... आएगा और ..... यहीं ठहरता है। ऐसा था तो उनके साथ ही क्यों न मरा। इसके कौन से बच्चे रोते हैं जिनके लिये ..... आ गया।

लाला सुगनचन्द जी मुझे गुरु जी कहते थे और किसी न किसी प्रकरणवश इन श्रीमती जी को भी गुरुजी शब्द का व्यवहार करना पड़ा था, लेकिन आज इनकी नजरों में मैं कितना गिर गया हूंगा? यह स्मरण कर मैं सिहर उठा।

हमारा प्रोग्राम क्या था मैं अभी तक अपनी मर्जी से बाहर था कि मित्रों की सलाह से मैं आगे गिरफ्तार होने को तैयार हूं कि नहीं। इन सब बातों का इस बेचारी को क्या पता? प्रकटरूप से तो वे जेल में और मैं बाहर था ही। अत: यह बाहर रहना इस समय मेरे लिए कितना लज्जाकारक साबित हुआ, यह मैं ही जानता हूं।

मुझे इसी गांव में मालूम हुआ कि हमारे डेरें के आगे रोज मर्रा पुलिस का पहरा रहता है। मैंने इस समाचार को गनीमत समझा और निश्चय किया कि आज जरूर गिरफ्तार होकर यह कलंक धो डालूंगा। लेकिन संयोग की बात देखिये - आज सुबह ही से पुलिस गैर हाजिर थी। रात बीत गई दिन के 12 बज गये फिर भी वह नहीं आई। इधर आज ही रात में मिर्जापुर गांव में मीटिंग होने वाली थी, जिसमें मेरा उपस्थित होना और देवबन्द को जत्था भेजना जरुरी था। अत एव मैंने सोचा चलो इस नैया को एक धक्का और लगा चलें। मैं डेरे से निकलकर उधर ही चला था कि एक नम्बरदार ने रोका- क्यों बाबाजी! बाहर चल दिये क्या?

मैंने कहा-हां! और क्या करें पुलिस का धरना सुना था जब वह आई ही नहीं तो अपने

काम का नुकसान क्यों करे।

उसने कहा- ऐसे बहादुर हो तो थाने में क्यों नहीं चले जाते? यद्यपि उसका ऐतराज ठीक था, क्योंकि मुझे गिरफ्तार होना ही होता तो मैं वहां जाकर भी हो सकता था। पर उस भोंदू को यह पता नहीं था कि मैं वहां डर के कारण नहीं बल्कि काम के कारण नहीं गया। अत एव मुझे उसकी तरफ से घृणा और क्रोध पैदा हो गया। मेरे अन्दर से आवाज आई- ले बोलो! ऐसे मूर्ख को कैसे समझावें।

..... को केन्द्र बनाया था और इसी कारण कई बार मुझे परगने से बाहर रहना पड़ता था। बस इसी बात को लेकर दुश्मनों ने कहना शुरु किया था कि 'वारंट के भय से इन्होंने इलाका छोड़ दिया .... जान छिपाये फिरते हैं। अफवाह भी है जिसे झूठी करने के लिए मैं मकान पर आया था, अगर मैं आज भी गिरफ्तार न हुआ तो इसमें मेरी क्या चालाकी थी। पर कहने वालों को कौन रोके?

अनुभव ने बतलाया है कि हमारे इस हतभाग्य देश में अभी भी ऐसे आदमी काफी हैं जो खुद तो कुछ करते नहीं पर करने वालों पर मौका पड़ते ही चोट लगाने से बाज नहीं आते।

मैं तमाम रास्ते ऐसे ही लोगों की मनोवृत्ति का सिंहावलोकन करता हुआ अन्धेरा हुए मीटिंग के लिए निश्चित उस सुनसान जंगली मकान पर पहुंचा जो ग्वालों का बनाया था और जिसमें अभी तक कोई भी साथी नहीं आया था। इस जंगल में एक चीता भी रहता था जिसने कई कमजोर डंगरों को मार डाला था। यह बात याद आते ही मैं कांप गया। मुझे चौं तरफ से चीते ही चीते आते दिखाई दिये। जरा भी झाड़ी का पत्ता हिलता मैं कान और आंखें उधर ही गाड़ देता था। इस वक्त मैं अपने साथियों से खीज गया था। अपने मन-मन में मीटिंग के लिए इस जगह का प्रस्ताव रखने वाले ठाकुर मोहर सिंह को वचन देकर देर करने के कारण सब मेम्बरों को बेवकूफ, मूर्ख वगेरा न जाने क्या-क्या उपाधियां बांट रहा था। एकाएक मुझे रूस, कोरिया, आयरलैण्ड, अरब, अफगानिस्तान आदि देशों की उन पार्टियों का स्मरण हो आया जो भय के कारण जंगलों, पहाड़ों और खण्डहरों में छिप कर कुछ सोचा करती थी। फर्क इतना ही है कि वे प्यार से कुछ और सोचती थी और हम कुछ और। लेकिन फिर भी मुझे यह सोचकर आन्तरिक भय मालूम हुआ कि जब इन सभी सभाओं का सिलसिला चल ही पड़ा है तो क्या ये हमेशा गांधी का मार्ग ही ग्रहण करती रहेंगी। मुझे ऐसा मालूम हुआ मानो प्रकृति खुद ही नहीं चाहती की उसके राज्य में कोई अन्याय करने वाला बहुत दिन कायम रहे और इसीलिए मानो उसी ने अंग्रेजों को यह अकल दी है कि वे हमारी खुलम-खुल्ला होने वाली तमाम कार्यवाहियों को

रोका हैं जिससे हम गुप्त सभायें कायम करें जो कुछ दिन आगे चलकर इस हुकुमत के विनाश का कारण हो। सरकार की तरफ से आजकल होने वाली तमाम हरकतों में जिन से जनता के दिलो में दुर्भाव पैदा हो रहे हैं, मानो कुदरत का ही हाथ है। निर्वह इन के हाथों से दमन और हमसे उस का मुकाबिला करा कर वे सब सामान जुटा रहीं है जो शीघ्र ही उस दिन को पैदा करेंगे जिस के स्मरण मात्र से रूंगटे खड़े हो जाते है। आह! यह हमारा हतभाग्य देश भी क्या वे....दिन देखेगा। यह कल्पना फुरते ही रूस की लाल क्रान्ति का इतिहास मेरी आंखों के सामने खड़ा हो कर नाचने लगा। इस समय मैं कहां बैठा था इसका मुझे कुछ भी ध्यान न था। अचानक कभी आदमी के आने की आहट मेरे कानों में पड़ी और मैं सम्भल कर बैठ गया।

भाषा का संस्कृति और जीवन से संबंध

- विश्वमोहन तिवारी

'प्रेम' शब्द का अंग्रेजी अनुवाद क्या है? आप कहेंगे 'लव'। यह अनुवाद कभी सही रहा होगा किन्तु आज सही नहीं है, लव एक 'फोर लैटर वर्ड' हो गया है। लव मानव की आकर्षक पोशाक में मात्र पैशनेट या पाशविक कृत्य ही रह गया है। जबकि भारतीय भाषाओं में प्रेम ढाई आखर का शब्द है और दोनों में मानव और दानव का अन्तर है। मानव वह है जो ढाई आखर वाला प्रेम करता है तथा दानव वह क्रूर व्यक्ति है जो फोर लैटर वाला प्रेम करता है। मानव जब घोर भोगवादी हो जाता है तब दानव बनने लगता है। भोगवादी अन्य व्यक्ति को मानव न समझ कर भोग की वस्तु ही समझता है। शब्दों के अर्थ में यह अन्तर कैसे आया?

भाषा संस्कृति की प्रमुख वाहिनी है, वह भाषा शाब्दिक, दृष्टिक, शरीरिक (बॉडी लैंग्वेज) आदि भाषा हो सकती है। दृष्टिक भाषा आज की भाषा है, जो नि:सन्देह सर्वाधिक आकर्षक भाषा है। आज साहित्य का पठन कम हो रहा है और टी वी का अधिक। टी वी की शाब्दिक भाषा चाहे कुछ भारतीय हो, किन्तु उसकी दृष्टिक भाषा पाश्चात्य भोगवादी ही है, तब इसमें क्या आश्चर्य, टीवी आते ही भारत में भोगवाद छा गया। प्रौद्योगिक पाश्चात्य संस्कृति भोगवादी है, उसकी भाषा भोगवाद की वाहिनी है।

आज का भोगवादी भारतीय भी 'आई लव यू' बोलता है। 'लव' तो हम सिनेमा से, मिठाई से भी करते है। किन्तु सिनेमा मिठाई से प्रेम नहीं करते अर्थात् लव इन्द्रियों का विषय अधिक है हृदय का कम। लव भोगवाद का विषय

अधिक है प्रेम का कम। किसी भी संस्कृति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है, समाज का व्यवहार या कहें उसकी संस्कृति उसके प्रेम की अवधारणा पर अधिक असर करती है। अंग्रेजी भाषा का भोगवादी शब्द 'लव' आज हमारे समाज के व्यवहार या संस्कृति को निर्धारित कर रहा है। अंग्रेजी शब्द का हमारी टीवी की शाब्दिक तथा दृष्टिक दोनों भाषाएं बहुत उपयोग करती हैं। भाषा और संस्कृति के संबंध गहरे और जटिल संस्कृति शब्द के अर्थ भी विविद्यता लिये हैं।

बीसवीं सदी के पश्चिम में भोगवाद ने तेजी पकड़ी क्योंकि सत्रहवीं सदी से लगातार ईसाई धर्म विज्ञान की अवधारणा पर आक्रमण करता रहा और विज्ञान उनको एक के बाद एक ध्वस्त करता रहा। यह द्वन्द्व सौरमंडल के केन्द्र से प्रारंभ होकर डार्बिन सिद्धान्त और उससे भी आगे गर्भपात तक की अवधारणाओं पर चल रहे हैं। पश्चिम में धर्म पर से श्रद्धा घटती ही गई है। बाइबिल का स्वर्ग एक लुभावनी कल्पना है, अब यह पश्चिम की समझ में अच्छे से आने लगा है, जबकि हजारों वर्ष पूर्व वेदान्त ने वेदों की स्वर्ग अवधारणा का निषेध कर दिया था। अब विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी ने वह स्वर्ग इसी पृथ्वी पर रचने का जिम्मा उठा लिया है और भोग बढ़ रहा है। भोगवाद तथा भोग में अंतर है। भोग तो शरीर आदि की रक्षा के लिये अनिवार्य है, जबकि जीवन का मुख्य ध्येय भोग, सुख प्राप्त करना भोगवाद है। आश्चर्य यह है कि हमारे ऋषियों ने स्वर्ग को अवांछनीय घोषित कर उससे बेहतर तथा उदान्त उद्देश्य और सच्चे सुख का रास्ता दर्शाया है, तब भी हम पश्चिम के भोगवाद की अन्धी नकल कर रहे है क्योकि हम अपनी भाषा और संस्कृति पर गये हैं। द्रष्टव्य है कि 'गुलाम ' लोग अंग्रेजी की पूंछ से वैतरणी पार करना चाहते हैं।

इसे अन्य उदाहरणों द्वारा भी समझा जा सकता है। गुरु और टीचर, माता-पिता और मोंम डैड, पत्नी तथा वाइफ, पति तथा हस्बैण्ड, मृत्यु तथा डैथ में गहरा सांस्कृतिक अन्तर है। आजकल सभी पढ़े-लिखे आदमी अपनी पत्नी को वाइफ ही कहते हैं और महिलाएं पति को हस्बैण्ड। यहां यह व्यवहार मात्र अपने को श्रेष्ठ दिखलाना ही नहीं है वरन् हिन्दी शब्दों में जो भावनाएं अन्तनिर्हित हैं कहीं उनसे बचने की भी भावना है। पत्नी कहने से एक तो विवाह में की गई प्रतिज्ञाएं याद आती है, पत्नी शब्द में हमारे धर्म के संस्कार है जो पति को पत्नी के प्रति प्रेम तथा उत्तरदायित्व की याद दिलाते हैं। मृत्यु भी गहरी संवेदनाओं से भरा शब्द है, उनसे बचने के लिए हम 'डैथ' कह देते हैं इस तरह देखा जाए तो मातृभाषा के शब्द संवेदनाओं से भरे रहते है, जिनका विदेशी शब्दों में जाना कठिन होता है। कम संवेदनाओं से भरे शब्दों का उपयोग करने से हमारी संवेदनशीलता

का ह्रास होता है, मानवीयता का क्षरण होता है।

जीवन में क्या करना चाहिए, किस तरह जीना चाहिए, जीवन का ध्येय क्या हैं? आदि के उत्तर बालकों के पास, अन्य पशुओं के समान, जन्मजात नहीं होते, उसे इनके उत्तर घर में, समाज में, ग्रंथों में तथा व्यावहारिक संस्कृति के द्वारा मिलते हैं। किसी शिशु को एक संस्कृति उदार बना सकती है तो अन्य संस्कृति कट्टर, एक मानव तो एक को दानव बना सकती है। यदि भाषा भ्रष्ट (इंजतक) होगी तो संस्कृति भी भ्रष्ट होगी हम अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण कर सकते हैं किन्तु ये नहीं जिनके पर्याय हमारी भाषा में प्रचलित है तथा इतनी संख्या में नहीं कि हमारी भाषा ही भ्रष्ट हो जाए।

हमारा जीवन आदर्श ईशावास्य का त्यागमय भोग रहा है- तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:। इसीलिए हमारे यहां जीवन के पार पुरुषार्थ हैं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। कामनाओं की पूर्ति के लिए अर्थात् भोग करने के लिए अर्थ का अर्जन धार्मिक मूल्यों के अनुसार करना है और जीवन का चरम लक्ष्य भोग नहीं मोक्ष है, दु:ख से मुक्ति ही मोक्ष है। हमारा साहित्य इन मूल्यों से प्रेरित है। रामायण, महाभारत, संस्कृत का साहित्य, भक्तिकाल की कृतियां, यहां तक की बीसवीं सदी के पूर्वार्ध का अधिकांश साहित्य भी। यदि यह साहित्य नहीं पढ़ा जाएगा तब त्यागमय भोग कहां से आयेगा।

पूंजीवाद तथा साम्यवाद दोनों ही भोगवादी है। जब से हमारी भाषा तथा साहित्य पर पश्चात्य संस्कृति का क्रुप्रभाव पड़ा और टी वी में उसका उपयोग हुआ है भोगवाद हमारी भाषा में साहित्य में और अन्तत व्यवहार में आने लगा हैं। टीवी के मालिकों की घोर भोगवादियों की तरह मुख्यतया अपने लाभ से मतलब उसके शुभ या अशुभ होने से नहीं। यह भी भोगवाद का ही परिणाम है कि स्त्री स्वातंत्र्य का उदात्त अवधारण का उपयोग वहां भी स्त्री के शोषण में परिलक्षित होता है, विद्युत् कम्पनी एनरॉन की महिला-कर्मियों के बयान इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। महात्मा गांधी ने भारतीय भाषाओं को महत्व देते हुए आदर्शों को अपने जीवन में और करोड़ों भारतीयों के जीवन में चरितार्थ कर दिया था। तब क्या कारण है कि पिछले बीस-पच्चीस वर्षों में ही हमारा आदर्श त्यागमय भोग के स्थान पर पाशविक भोगवाद हो गया है। यह विडंबना ही है कि बढ़ती समृद्धि के साथ समाज में भयंकर अपराध विखंडन, द्वेष, विवाद, क्रोध, लोभ, अंहकार, मोह, जलन और अंतत दुख भी तेजी से बढ़ रहे है। सामाजिक तथा पारिवारिक प्रेम का स्थान व्यवसायिकता ने ले लिया है। यह मुख्यतया इसलिए कि हम अपनी भाषा तथा संस्कृति में जीने के स्थान पर पाश्चात्य भाषा तथा संस्कृति

की नकल कर रहे हैं। अनेक अंग्रेजीपरस्त विद्वानों की मान्यता है कि अंग्रेजी के राजभाषा बने रहने से भी पाश्चात्य संस्कृति नहीं आयेगी और अंग्रेजी में यथेष्ट भारतीय साहित्य का अनुवाद कर अंग्रेजी द्वारा भी भारतीय संस्कृति पोषित की जा सकती है। उन्हें पुनर्विचार करना चाहिए।

अपराधों की अमानवीयता तथा संख्या बढ़ी है। पहले एक पुरुष विवाह पूर्व अपनी कन्या मित्र का उपभोग शायद ही करता था और यदि करता भी था तो एक वेश्या की तरह तो निश्चित नहीं करता था। पैसे के लिए पहले के चोर अधिकांशतया हत्या नहीं करते थे अब तो अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग लोभ में निस्संदेह अपने मित्र की मां की भी हत्या कर देते है। हिंसा तथा यौन के अपराध इतने बढ़ गए? जीवन मूल्यों में इतना पतन कैसे और क्यों हुआ? इनमें तथा अंग्रेजी और टी वी के प्रसार के संबंध तो अवश्य हैं।

भाषा और मनुष्य के जीवन में उतना ही गहरा संबंध है जितना माता और संतान में और विमाता और विदेशी राजभाषा के व्यवहारों में भी काफी समानता है। समस्त जीवों में शाब्दिक भाषा मात्र मनुष्य के पास ही है। पांशविक प्रवृतियों का उदात्तीकरण भाषा और संस्कृति के ही द्वारा सम्भव है। अर्थात् भाषा तथा संस्कृति के द्वारा मनुष्य मानव या दानव बन सकता है। जब भाषा का इतना मूल और क्रान्तिकारी प्रभाव पड़ता है तब यह देश भाषा को चर्चित महत्व क्यों नहीं देता? यह भी हमारे सांस्कृतिक पतन का एक ज्वलंत उदाहरण है मीडिया ने मानवीय संस्कृति को धत्ता बतलाते हुए ऐसी सदा आधुनिक पारिस्थितिकी का निर्माण किया है जिसमें भूमण्डलीय खुला बाजार में सदाबहार संस्कृति के रूप में अवतार लिया है। खुले बाजार (की मार्किट) में केवल शक्तिशाली फ्री होते है, ग्राहक या उपभोक्ता नहीं, जिसे तो 'हस्तकौशल' (मैनिपुलेशन) द्वारा स्वतंत्रता का सब्जवाग दिखलाते हुए अपने लिए सर्वाधिक लाभदायक उत्पाद को खरीदने के लिए सम्मोहित किया जाता है। भोगवादी विज्ञापनों ने आज भाषा को मानो कोठे पर बिठा दिया है, भाषा का लुभावना रूप ही वेश्या की तरह उसका संदेश हो गया है, उसका कश्य नहीं। भाषा का ऐसा बाजारू उपयोग मात्र व्यवसाय में नहीं वरन् राजनीति तथा अन्य व्यवहारों में भी आ गया है। 'मैनिपुलेशन' आज की संस्कृति के व्यवहार का प्रमुख अस्त्र हो गया है और मैनिपुलेशन मानव को राक्षस बनाता है क्योंकि अन्य मानव का मैनिपुलेशन नहीं करना, मानवीयता की मूल शर्त है।

जब शासन और शासितों की भाषा में जमीन-आसमान का अन्तर हो तब जनतंत्र सचमुच में कार्य नहीं कर सकता। यह तो अंग्रेजीपरस्त लोगों का शासन है, जिसमें अंग्रेजी

का महत्व सर्वोपरि है। अनेक वर्षों से जिस तरह से प्रशासन तथा विधायिका के कुछ वर्गों ने देश का शोषण किया है, वह सिद्ध करता है कि इस देश में चाहे चुनाव हो रहे हों, सच्चा जनतंत्र प्रभावी रूप में नहीं है। भारतीय भाषायी जनता, अंग्रेजी भाषाई शासकों से किस तरह संवाद कर सकती है। अंग्रेजी के आतंक ने जनता को गूंगा बना दिया है, भारत ने आज न केवल एक गूंगी संस्कृति पैदा हो रही है, वरन् वन्ध्या और बंजर संस्कृति हो रही है।

लगभग दो सौ वर्षों से अंग्रेजी इस देश में शासकों की भाषा रही है और पढ़ाई जा रही है। तब क्यों स्वतंत्रता पश्चात् विज्ञान में इस देश को एक भी नोबेल पुस्कार नहीं मिला है। जबकि विज्ञान के स्नातकों की भारत में कमी नहीं है और यहूदी भाषी इजाराइल को जिसकी आबादी भारत की आबादी की एक प्रतिशत से भी कम है, ग्यारह नोबेल पुस्कार मिले हैं। इजारायल अपनी भाषा में शिक्षा देता है और अपनी भाषा में जीवन जीता है। चीन, जापान, हॉलैंड आदि समुन्नत देश अपनी भाषा में जीते हैं और इसीलिए स्वतंत्र वाचाल तथा सृजनात्मक हैं, हमारे सरीखे गुलाम, गूंगे तंथा अनुर्वर नहीं हैं।

मात्र रोटी के लिए अंग्रेजी पढ़ने वाला व्यक्ति 'काम चलाऊ' अंग्रेजी ही सीखता है, फलस्वरूप उसके जीवन मूल्य भी बस खाने-कमाने तक ही सीमित रह जाते है और विडंबना यह है कि वह श्रेष्ठता ग्रंथि का पोषण करने लगता है जो वास्तविक ज्ञान की नहीं वरन् एक 'अंग्रेजीदा' होने की नकल होती है। पाश्चात्य देश हमसे प्रौद्योगिकी में इतने आगे है कि उनके प्रति भी हममें हीनभावना ही रही है और अंग्रेजी की शिक्षा तो हमें पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति का बड़प्पन बतलाती रहती है और हमारी भाषा, सभ्यता और संस्कृति को हीन सिद्ध करती रहती है। अंग्रेजी ने हमारी गुलामी की भावना को पनपाया ही है। पाश्चात्य संस्कृति भोगवादी है, अहंवादी है और हम इस दिशा में उनसे भी आगे बढ गये हैं। पश्चिम का व्यक्ति इतना स्वार्थी नहीं होता कि अपने स्वार्थ को नुकसान पहुंचाए क्योंकि स्वार्थ एक सीमा के बाद आत्मघातक हो जाता है। हम उससे और भी अधिक स्वार्थी हो गये हैं। पश्चिम का व्यक्ति इतना अहंवादी नहीं हो गया है कि दूसरे के अहं पर हमला करते रहें हम इससे भी अधिक अहंवादी हो गये है। अर्थात् पश्चिम के पास अपनी इस अहंवादी तथा भोगवादी संस्कृति को संतुलन में रखने की भी संस्कृति है जिसका उन्होंने पिछले सैकड़ों वर्षों में विकास किया है। तब भी उनकी संस्कृति समाज में सुख के साथ तनाव भी पैदा कर रही है और प्रकृति को बुरी तरह प्रदूषित कर रही है, वन्य प्राणियों का विनाश कर रही है, पृथ्वी के ओजोन

की परत में छेद कर रही है। उनकी नकल में हमने गंगा-युमना को गंदी नाली बना दिया है। हमें उनकी नकल करने की आवश्यकता नहीं है। हमारी संस्कृति में वे सब तत्व हैं जिनके द्वारा हम आधुनिकतम जीवन का पूरा तथा सम्यक् उपभोग कर सकते हैं। यदि हम अपनी श्रेष्ठ संस्कृति में वापस जाना चाहते हैं तब हमें अंग्रेजी के मोहपाश से मुक्त होकर, अपनी भाषाओं में वापस जाना पड़ेगा। शोपेनहार एल्डस हक्सले, विलियम जोन्स, टी एस इलियट, टायनवी, आन्दे मालामें, जोसेफ कैम्पबैल आदि विश्व के श्रेष्ठ विद्वानों ने घोषित किया है कि भारतीय दर्शन तथा संस्कृति श्रेष्ठतम है।

हीनता पीड़ित इंडियन पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति की नकल करने में लगे हैं। कोला में हानिकारक जहर है, यह सिद्ध होने के बाद भी कोला खूब बिक रहा है, हेनबर्गर तथा पिज्जा जैसे जंक फूड खूब बिक रहे हैं हमने अपनी अकल विज्ञापनों को बेच दी है। इस सांस्कृतिक पतन के दो मुख्य कारण है- एक, घोर भोगवादी टीवी द्वारा भोगवाद का हाइबोल्ड भाषा में विज्ञापन। दूसरे, सत्ता तथा रोटी से जुड़ी अंग्रेजी भाषा में आम पढ़े लिखे लोगों को भारतीय भाषाओं के समुचित अध्ययन से हटा दिया और अंग्रेजी भी उतनी ही सीखी जा रही है जितनी रोटी कमाने के लिए आवश्यक होती है। अर्थात् हमारा सारा ज्ञान मात्र रोटी कमाने के कौशल तक ही सीमित रह गया। एक भारतीय भाषाओं का और भारतीय ग्रन्थों का अपूर्ण ज्ञान होने से भारतीय संस्कृति की पकड़ कम हो जाती है, दूसरे नकल के द्वारा पाश्चत्य संस्कृति भी गलत आ रही है इनके फलस्वरूप मानवीय मूल्य कमजोर हुए और भोगवादी पशुत्व बढ़ा है।

यह अकाट्य सत्य है कि यह युग विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का है, जो इसमें पिछड़ गया वह विकसित देशों का गुलाम ही रहेगा। सौ वर्षों के पूरे प्रयत्नों के पश्चात् अंग्रेजी जानने वालों की संख्या तो लगभग 8-10 प्रतिशत है और विज्ञान जानने वालों की संख्या तो लगभग 2 प्रतिशत। इसका एक भंयकर दुष्परिणाम यह है कि विज्ञान की खोजों तथा अविष्कार के लिए शेष आबादी का कोई योगदान नहीं। दूसरा दुष्परिणाम यह है कि ये दो प्रतिशत लोग भी अंग्रेजी के कामचलाऊ ज्ञान के कारण विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में विशेष उत्कृष्ट कार्य नहीं कर सकते। तीसरे, जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण है अविष्कार खोज या रचनात्मक कार्यों का स्रोत संवेदनशील मन तथा बुद्धि से होता है, मात्र तार्किक बुद्धि नहीं। मानव की रचनाशीलता उसकी संवेदनात्मक भाषा के द्वारा प्रस्फुटित होती है। रोटी के लिए सीखी गई/विदेशी भाषा किसी भी व्यक्ति की संवेदनात्मक भाषा नहीं होती। बात यह है व्यक्ति

की मातृभाषा उसकी संवेदनात्मक भाषा तथा उसकी बौद्धिक भाषा दोनों होती है। अतएव उसकी मौलिक चिंतन एवं सृजन की भाषा होती है। अन्य भाषाएं, बौद्धिक भाषाएं हो सकती है, संवेदनात्मक बहुत कम। भारत में हमने अंग्रेजी के मोह में अपनी मातृभाषा की उपेक्षा की और परिणामत: मौलिकता तथा सृजनशक्ति ने हमारी अवहेलना की। मुख्यतया इसलिए हम विश्व की विज्ञान-प्रौद्योगिकी दौड़ में तथा मौलिक चिंतन एवं सृजन कार्यों में पीछे रह गए हैं। जब जापान जैसा देश अपनी भाषाओं में सारे कार्य सम्मानपूर्वक कर रहा है, तब भारत भी कर सकता है, बस यह अपनी भाषाओं को उचित महत्व दें।

भारत में जितने विद्वान शिक्षित लोगों में भी अंधविश्वास, भय तथा कुतर्क देखने को मिलते है, उतने यूरोप में नहीं भारतीयों को तथ्यों की जानकारी अच्छी होती है, किन्तु उनकी वैज्ञानिक समझ कमजोर रहती हैं। क्योंकि अंग्रेजी में विज्ञापन पढ़ने में उसका श्रम विदेशी पदों को रटने में ज्यादा रहता है। न कि वैज्ञानिक अवधारणाओं को समझने में । बीसवीं सदी के प्रारंभ में बंगाल के प्रोफेसर अपने विद्यार्थियों को विज्ञान, बांग्ला तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में समझाते थे, सम्भवत इसीलिए भी उनके शिष्यों ने विज्ञान में नाम कमाया। सॉफ्टवेयर की भाषा प्रमुखतया गणित है, इसलिए भारतीय भी इसमें नाम कमा रहे हैं। यद्यपि द्वितीय स्तर तो कार्य में मूल शोध से कम।

उपरोक्त चर्चा के आधार पर कुछ निष्कर्ष प्रस्तुत हैं-

१. सांस्कृतिक एवं आर्थिक गरीब देश में रोटी की भाषा ही राजभाषा हो सकती है, अंग्रेजी रोटी की भाषा है।

२. राजभाषा यदि वह विदेशी हो तो अंतत: वही राष्ट्रभाषा हो जाती है और राष्ट्रभाषाएं क्षीण हो जाती है।

३. अल्पमत में होते हुए भी 'श्रेष्ठता-पीड़ित' समुदाय की संस्कृति तथा भाषा पर हावी हो जाती है। अंग्रेजी भाषा वाले श्रेष्ठ माने जाते हैं।

४. जब दो बिल्लियां लड़ती है तो न्याय के लिए बन्दर के पास जाती है तब सारा लाभ बन्दर को खुशी-खुशी मिल जाता है। आज अधिकांश भारतीय भाषाएं अंग्रेजी से ही न्याय चाहती हैं।

५. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में समुन्नत देश की संस्कृति और भाषा अन्य कमजोर देशों की संस्कृति तथा भाषा पर हावी हो जाती है।

६. क्या भारतीय भाषाओं का भविष्य निराशापूर्ण है?

भारत के लोग बड़े गर्व से कहते हैं कि हम प्रौद्योगिकी के कुछ क्षेत्रों में अग्रिम पंक्ति में हैं, यथा परमाण्विकी ऊर्जा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी इत्यादि में । इसमें सन्देह